(43) कश्मीर सिंह भुल्लर (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के आधिपत्य द्वारा निर्धारित अनुपात के आलोक में, पीके वासुदेवा को व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए घर के उपयोग के संबंध में एक नई याचिका उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसी कोई याचिका नहीं है। किराया नियंत्रक के समक्ष दायर अपने हलफनामे में उन्होंने यह मुद्दा उठाया था।

(44) किरायेदारों द्वारा अपने आवेदनों और शपथपत्रों में दी गई सभी दलीलों की जांच करने पर, यह पाया गया कि उन दलीलों ने किराया नियंत्रक के समक्ष किसी भी विचारणीय मुद्दे को जन्म नहीं दिया।

(45) परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता-किरायेदारों के खिलाफ किराया नियंत्रक द्वारा पारित बेदखली के आदेश दिनांक 13 जून, 1997 में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। इसलिए पुनरीक्षण याचिकाएं खारिज की जाती हैं। मूल्य के हिसाब से कोई आर्डर नहीं।

आर.एन.आर

न्यायमूर्ति वी.एस अग्रवाल के समक्ष
नरेश कुमार और अन्य।-याचिकाकर्ता
बनाम
कैलाश देवी एवं अन्य, प्रतिवादी
C.R. No 2013 of 1998
10 नवंबर 1998

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—0.20 *Rl.*18—विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री पारित—पारित प्रारंभिक डिक्री के खिलाफ अपील की गई—इसके बाद अंतिम डिक्री पारित करने और विभाजन के तरीके का सुझाव देने के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के लिए आवेदन दायर किया गया—उसे इस आधार पर चुनौती दी गई कि अंतिम डिक्री पारित करने के लिए आवेदन परिसीमा द्वारा वर्जित है। -माना गया, न्यायालय न केवल पार्टियों के अधिकारों की घोषणा करता है, बल्कि अंतिम डिक्री पारित करने के लिए बाध्य है - अंतिम डिक्री का मसौदा तैयार करना उक्त कार्यवाही की निरंतरता है - परिसीमन लागू नहीं होता है।

निर्धारित किया गया,सिविल प्रक्रिया संहिता के 0.20 *Rl.*18 के तहत, जब विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री पारित की जाती है, तो न्यायालय न केवल पार्टियों के अधिकारों की घोषणा करता है, बल्कि आगे की कार्रवाई के बाद, अंतिम डिक्री पारित करने के लिए बाध्य होता है, यदि अनुमति योग्य यदि आवश्यक हो तो उन्हें आगे का निर्देश देना होगा। विभाजन के लिए पारित प्रारंभिक डिक्री के मामले में, इस संबंध में आवश्यक रूप से कोई और अधिकार अर्जित नहीं होता है। यह उसी कार्यवाही की अगली कड़ी होगी।

(पैरा 10)

इसके अलावा यह निर्धारित किया गया है कि विभाजन के मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री के मामले में, अंतिम डिक्री का निकालना उक्त कार्यवाही की निरंतरता है। इसलिए, यह कहना अनुचित है कि परिसीमा अवधि लागू होगी। ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ताओं की दलील को सही ढंग से खारिज कर दिया।

(पैरा 14)

- ए.सी जैन, याचिकाकर्ता के वकील।
आर.एस मित्तल, वरिष्ठ अधिवक्ता के साथ वकील सुधीर मित्तल प्रतिवादियों के लिए।

निर्णय

न्यायमूर्ति वी.एस अग्रवाल,

(1) वर्तमान पुनरीक्षण याचिका नरेश कुमार और एक अन्य द्वारा दायर की गई है, जिसे इसके बाद याचिकाकर्ताओं के रूप में वर्णित किया गया है, जो विद्वान सिविल जज (सीनियर डिवीजन), रोहतक द्वारा दिनांक 9 मार्च, 1998 को पारित आदेश के खिलाफ निर्देशित है। आक्षेपित आदेश के आधार पर, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ताओं के अनुरोध को खारिज कर दिया कि अंतिम डिक्री

पारित करने के लिए दायर आवेदन समय से बाधित है और प्रारंभिक डिक्री के अनुसार विभाजन के तरीके और प्रतिवादी डिक्री-धारकों की हिस्सेदारी का सुझाव देने के लिए एक वकील नियुक्त किया गया है ।

(2) प्रासंगिक तथ्य यह है कि विभाजन के लिए एक प्रारंभिक डिक्री पारित की गई थी। इसके बाद प्रतिवादी डिक्री-धारकों ने 18 मार्च, 1989 के फैसले और डिक्री के आधार पर अंतिम डिक्री पारित करने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें डिक्री-धारकों के विभाजन और हिस्सेदारी का सुझाव देने के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति का अनुरोध किया गया। आवेदन का नोटिस उन याचिकाकर्ताओं को जारी किया गया था जिन्होंने यह दलील दी थी कि प्रतिवादी डिक्री धारक अपने शेयर पाने के हकदार नहीं हैं क्योंकि आवेदन समय से बाधित है। यह तर्क दिया गया था कि प्रारंभिक डिक्री 18 मार्च, 1989 को पारित की गई थी। इसके खिलाफ, विद्वान जिला न्यायाधीश, रोहतक और उसके बाद इस न्यायालय में एक अपील दायर की गई थी। इस न्यायालय ने 8 फरवरी, 1993 को इसे खारिज कर दिया था। पहली और दूसरी अपील के लंबित रहने के दौरान, कोई रोक नहीं लगाई गई थी। तदनुसार, याचिकाकर्ताओं के अनुसार, अंतिम डिक्री पारित करने की मांग करने वाला आवेदन समय से बाधित था। विद्वान ट्रायल कोर्ट ने, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, आक्षेपित आदेश के तहत, उक्त तर्क को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि प्रारंभिक डिक्री 18 मार्च, 1989 को पारित की गई थी और उत्तराधिकारी न्यायालय के पास आवेदन पर विचार करने और निर्णय लेने की शक्ति थी क्योंकि आवेदन नियुक्ति के लिए दायर किया गया था। स्थानीय आयुक्त समय के भीतर थे। विद्वान ट्रायल कोर्ट के अनुसार, पहले मुकदमेबाजी के कारण आवेदन दायर नहीं किया जा सका था , मुक़दमा पार्टियों के बीच लंबित है। उक्त आदेश से क्षुब्ध होकर वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की गयी है।

(3) जैसा कि ऊपर बताया गया है, याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने आग्रह किया था कि अंतिम डिक्री पारित करने के लिए दायर आवेदन समय से बाधित था और इस संबंध में उपरोक्त तथ्य को दोहराया जा सकता है। विभाजन हेतु प्रारम्भिक डिक्री 18 मार्च, 1989 को पारित की गयी। अपील विद्वान जिला न्यायाधीश ,रोहतक, वर्ष 1991 में द्वारा खारिज कर दी गई। और इस न्यायालय ने 8 फरवरी, 1993 को दूसरी अपील खारिज कर दी। 30 सितंबर, 1994 को अंतिम डिक्री पारित करने के लिए आवेदन दायर किया गया था। माना जाता है कि लंबित रहने के दौरान कोई रोक नहीं दी गई थी। इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील के अनुसार, परिसीमा की अवधि प्रारंभिक डिक्री पारित होने के समय से चलनी शुरू हो जाती है।

(4) याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने अपने तर्क के समर्थन में बलजीत सिंह (एल.आर.एस. द्वारा मृत) बनाम जे.आई कनिंगटन और अन्य (1) के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। उद्धृत मामले में, भूमि के बंधक के आधार पर कुछ राशि की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया गया था। गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री के लिए एक प्रारंभिक डिक्री पारित की गई थी। उसमें बकाया पाई गई राशि के भुगतान के लिए अवधि तय की गई। इसके बाद, प्रारंभिक डिक्री के तीन साल बाद अंतिम डिक्री की तैयारी के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने माना कि अंतिम डिक्री की तैयारी के लिए आवेदन समय से बाधित था।

(5) विद्वान वकील का उक्त तर्क पूरी तरह से किसी भी योग्यता से रहित है। जैसा कि इसके बाद देखा जाएगा, बलजीत सिंह के मामले (सुप्रा) में निर्णय पूरी तरह से अलग है क्योंकि यह एक बंधक मामले में राशि की वसूली के लिए पारित प्रारंभिक डिक्री से संबंधित है। इस संबंध में नागरिक प्रक्रिया संहिता के 0.34 (संक्षेप में "कोड") के तहत विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री और फौजदारी के लिए डिक्री के बीच एक स्पष्ट अंतर निकाला जाना चाहिए।

(6) उक्त विवाद को समझने के लिए, संहिता के 0.20 *Rl.*18 का संदर्भ लिया जा सकता है जो संपत्ति के विभाजन या उसमें एक शेयर के अलग कब्जे के मुकदमे में डिक्री से संबंधित है। इसे इस प्रकार पढ़ा जाता है:-

"18. संपत्ति के बंटवारे या उसमें किसी हिस्से के अलग कब्जे के मुकदमे में डिक्री :—जहां न्यायालय संपत्ति के बंटवारे या उसमें किसी हिस्से के अलग कब्जे के लिए मुकदमे में डिक्री पारित करता है, तो,—

(1) यदि और जहां तक डिक्री सरकार को राजस्व के भुगतान के लिए मूल्यांकन की गई संपत्ति से संबंधित है, तो डिक्री(1) एसीआर 1984 इलाहाबाद 209।

संपत्ति में रुचि रखने वाले कई पक्षों के अधिकारों की घोषणा करेगा, लेकिन इस तरह के विभाजन या पृथक्करण को कलेक्टर, या उसके द्वारा इस संबंध में प्रतिनियुक्त कलेक्टर के किसी राजपत्रित अधीनस्थ द्वारा ऐसी घोषणा के अनुसार और धारा 54 का प्रावधानों के साथ करने का निर्देश देगा। ;

(2) यदि ऐसी डिक्री किसी भी अन्य अचल संपत्ति या चल संपत्ति से संबंधित है, तो न्यायालय, यदि आगे की जांच के बिना विभाजन या पृथक्करण सुविधाजनक रूप से नहीं किया जा सकता है, तो संपत्ति में रुचि रखने वाले कई पक्षों के अधिकारों की घोषणा करते हुए एक प्रारंभिक डिक्री पारित कर सकता है और आवश्यक ऐसे आगे के निर्देश दे सकता है।"

(7) इसी तरह, 0.34 अचल संपत्ति के बंधक से संबंधित मुकदमों से संबंधित है। 0.34 *Rl.3* फौजदारी मुकदमे में अंतिम डिक्री को संदर्भित करता है। संहिता के 0.34 *Rl.3* के उप-नियम (1) और (2) इस प्रकार हैं:-

"3. फौजदारी मुकदमे में अंतिम डिक्री:—(1) जहां, प्रतिवादी को गिरवी रखी गई संपत्ति को छुड़ाने के सभी अधिकारों से वंचित करने वाली अंतिम डिक्री पारित होने से पहले, प्रतिवादी नियम के उपनियम (1) के तहत उससे देय सभी राशियों का भुगतान न्यायालय में करता है। 2, न्यायालय, प्रतिवादी द्वारा इस संबंध में किए गए आवेदन पर, एक अंतिम डिक्री पारित करेगा-

(a) वादी को प्रारंभिक डिक्री में निर्दिष्ट दस्तावेजों को सौंपने का आदेश देना, और, यदि आवश्यक हो, -

(b) उसे उक्त डिक्री में निर्देशित अनुसार प्रतिवादी की कीमत पर गिरवी रखी गई संपत्ति को फिर से हस्तांतरित करने का आदेश देना, और यदि आवश्यक हो तो-

(c) उसे प्रतिवादी को संपत्ति पर कब्ज़ा करने का आदेश दिया।

(2) जहां उप-नियम (एलजे) के अनुसार भुगतान नहीं किया गया है, अदालत इस संबंध में वादी द्वारा किए गए आवेदन पर एक अंतिम डिक्री पारित करेगी, जिसमें यह घोषणा की जाएगी कि प्रतिवादी और उसके माध्यम से या उसके अधीन दावा करने वाले सभी व्यक्ति या सभी अधिकारों से वंचित कर दिए जाएंगे। गिरवी रखी गई संपत्ति को छुड़ाना और साथ ही, यदि आवश्यक हो, तो प्रतिवादी को वादी को संपत्ति का कब्ज़ा देने का आदेश देना।"

(8) इसी प्रकार, संहिता के आदेश 0.34 *Rl.4* उप-नियम (3) और (4) मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री के संबंध में प्रक्रिया निर्धारित करते हैं।

बिक्री और फौजदारी मुकदमे में बिक्री पर डिक्री देने की न्यायालय की शक्ति। इसे इस प्रकार पढ़ा जाता है:-

(1)) फौजदारी मुकदमे में बिक्री की डिक्री करने की शक्ति: - एक विषम बंधक के मामले में फौजदारी के लिए एक मुकदमे में, यदि वादी सफल होता है, तो न्यायालय मुकदमे के किसी भी पक्ष या बंधक सुरक्षा में रुचि रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति के उदाहरण पर कर सकता है। या मोचन का अधिकार, ऐसी शर्तों पर (फौजदारी के लिए डिक्री के बदले में) एक समान डिक्री पारित करें, जो उचित समझे, जिसमें बिक्री के खर्चों को पूरा करने और सुरक्षित करने के लिए न्यायालय द्वारा निर्धारित उचित राशि जमा करना शामिल है। शर्तों का निष्पादन ।

(4) जहां, बिक्री के लिए एक मुकदमे में या फौजदारी के लिए एक मुकदमे में, जिसमें बिक्री का आदेश दिया गया है, बाद में गिरवीदार या स्वामित्व प्राप्त करने वाले व्यक्ति, या अधिकारों के अधीन, ऐसे किसी भी बंधकदार को पार्टियों के रूप में शामिल किया जाता है, उपनियम (1) में संदर्भित प्रारंभिक डिक्री) परिशिष्ट डी के फॉर्म नंबर 9, फॉर्म नंबर 10 या फॉर्म नंबर 11, जैसा भी मामला हो, में निर्धारित तरीके और प्रारूप में मुकदमे के पक्षकारों के संबंधित अधिकारों और देनदारियों के न्यायनिर्णयन के लिए प्रावधान करेगा। मामले की परिस्थितियों के अनुसार ऐसे बदलावों की आवश्यकता हो सकती है।"

(9) संहिता का 0.34 *Rl.5* (संहिता की अंतिम डिक्री को संदर्भित करता है और संहिता का 0.34 *Rl.*8 मोचन मुकदमे में अंतिम डिक्री से संबंधित है। संहिता के 0.34 *Rl.*8 के उप-नियम (1) और (2) को भी लागू किया जा रहा है। सुविधा की बिक्री के लिए नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"8. मोचन वाद में अंतिम डिक्री (1) जहां, वादी को बंधक संपत्ति को छुड़ाने के सभी अधिकारों से वंचित करने वाली अंतिम डिक्री पारित होने से पहले या इस नियम के उपनियम (3) के तहत पारित अंतिम डिक्री के अनुसरण में आयोजित बिक्री की पुष्टि होने से पहले यदि वादी नियम 7 के उप-नियम (1) के तहत उसे देय सभी राशियों का भुगतान न्यायालय को करता है, तो न्यायालय, वादी द्वारा इस ओर से किए गए आवेदन पर, एक अंतिम डिक्री पारित करेगा, या, यदि ऐसी डिक्री पारित की गई है , एक आदेश-

(a) प्रतिवादी को प्रारंभिक डिक्री में निर्दिष्ट दस्तावेजों को सौंपने का आदेश देना, और, यदि आवश्यक हो-

(b) उसे उक्त डिक्री में निर्देशित अनुसार, वादी की कीमत पर गिरवी रखी गई संपत्ति को फिर से हस्तांतरित करने का आदेश दिया, और, यदि आवश्यक हो तो-

(c) उसे वादी को संपत्ति पर कब्ज़ा करने का आदेश दिया।

(2) जहां गिरवी रखी गई संपत्ति या उसका कोई हिस्सा इस नियम के उप-नियम (3) के तहत पारित डिक्री के अनुसरण में बेचा गया है, न्यायालय इस नियम के उप-नियम (1) के तहत एक आदेश पारित करेगा, जब तक कि वादी, उप-नियम (1) में उल्लिखित राशि के अलावा, क्रेता को भुगतान के लिए न्यायालय में क्रेता द्वारा भुगतान की गई खरीद-धन की राशि के पांच प्रतिशत के बराबर राशि जमा करता है।

जहां इस तरह की जमा राशि की गई है, क्रेता उसके द्वारा अदालत में भुगतान की गई खरीद राशि की राशि के पांच प्रतिशत के बराबर राशि के साथ पुनर्भुगतान के आदेश का हकदार होगा।

(10) ऊपर दिए गए संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि संहिता के 0. 34 से संबंधित मामलों में, अर्थात्, अचल संपत्ति के बंधक से संबंधित मुकदमे में पारित प्रारंभिक डिक्री, प्रारंभिक डिक्री के बाद अवसर दिया जाना है। भुगतान करने के लिए निर्णय देनदार. अचल संपत्ति के बंधक से संबंधित मुकदमे में एक बार प्रारंभिक डिक्री पारित कर दी गई है, जब तक कि बाद की प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती है और अंतिम डिक्री का पालन नहीं किया जाता है, तब तक अंतिम डिक्री पारित नहीं की जा सकती है। जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, संहिता के 0.34 *Rl.4* के तहत न्यायालय को छह महीने से अधिक की अवधि तय करनी होगी जिसके भीतर प्रतिवादी को वादी को न्यायालय द्वारा निर्धारित राशि का भुगतान करना होगा। यदि समय के भीतर राशि का भुगतान नहीं किया जाता है तो वादी अंतिम डिक्री निकालने के लिए आवेदन कर सकता है। कोर्ट को समय बढ़ाने का अधिकार है. इसी प्रकार, संहिता के 0.34 *Rl.5* के तहत, गिरवी रखी गई संपत्ति की बिक्री के निष्पादन में निर्णय देनदार द्वारा डिक्रीटल राशि जमा करने की अनुमति है जब तक कि बिक्री की पुष्टि नहीं हो जाती। ऊपर उल्लिखित प्रासंगिक प्रावधानों से पता चलता है कि संपत्ति के बंधक के आधार पर अचल संपत्ति से संबंधित मुकदमों के मामलों में, अंतिम डिक्री पारित होने से पहले, आगे के आवेदन या कार्यवाही में, जैसा भी मामला हो, प्रारंभिक डिक्री का पालन किया जाना आवश्यक है। हालाँकि, संहिता के 0.20 *Rl.*18 के तहत जब विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री पारित की जाती है, तो न्यायालय न केवल पार्टियों के अधिकारों की घोषणा करता है, बल्कि आगे का कार्य पूरा होने के बाद, यदि अनुमति हो तो, अंतिम डिक्री पारित करने के लिए बाध्य है। यदि आवश्यक हो तो उसे आगे निर्देश देना होगा। विभाजन के लिए पारित प्रारंभिक डिक्री के मामले में, इस संबंध में आवश्यक रूप से कोई और अधिकार अर्जित नहीं होता है। यह उसी कार्यवाही की अगली कड़ी होगी।

(11) जब भी विभाजन के मुकदमे में विभाजन की प्रारंभिक डिक्री पारित की जाती है, तो न्यायालय को यदि आवश्यक हो तो तुरंत एक स्थानीय आयुक्त नियुक्त करना चाहिए, या उसके हाथ बांधने के बजाय अन्य कार्यवाही करनी चाहिए। इस संबंध में कार्यवाही जारी रखना उनका कर्तव्य है। रामनाथन *चेट्टी*वी. अलगप्पा चेट्टी और अन्यके मामले में इस प्रश्न पर विचार किया गया है।

(2)। मद्रास उच्च न्यायालय ने माना कि जब तक विभाजन के मुकदमे में अंतिम डिक्री पारित नहीं हो जाती, तब तक परिसीमन लागू नहीं होगा क्योंकि मुकदमा अंतिम डिक्री पारित होने तक जारी रहता है। इसे निम्नानुसार आयोजित किया गया:-

"यह मेरे लिए स्पष्ट है कि मुकदमा कुछ उद्देश्यों के लिए कम से कम अंतिम डिक्री तक जारी रहता है; यह वास्तव में एक विसंगति होगी कि किसी भी डिक्री पर मुकदमे के अलावा अन्य कार्यवाही द्वारा पहुंचा जा सकता है। ऐसा होने पर, मुझे इस विचार के लिए कोई अधिकार नहीं दिखाया गया है कि किसी लंबित मुकदमे में अदालत को फैसले के लिए आगे बढ़ने की इच्छा रखने वाला आवेदन किसी भी सीमा के नियम द्वारा शासित होता है।

(12) फकीर चंद और अन्य बनाम मोहम्मद अकबर खान और अन्य (3) के मामले में दिए गए फैसले में यह अंतर अधिक स्पष्ट रूप से सामने आया है। न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:-

"मुकदमों की पहली श्रेणी में प्रारंभिक डिक्री पारित होने के बाद न्यायालय बाध्य नहीं है *स्वप्रेरणा से*इस उद्देश्य के लिए आवेदन किए जाने तक अंतिम डिक्री पारित करने के लिए, - 0.34 के अनुसार, लेकिन प्रारंभिक डिक्री के बाद के मामलों के बाद के वर्ग में, न्यायालय आगे बढ़ने और संपत्ति के वास्तविक विभाजन के लिए एक आयुक्त नियुक्त करने के लिए बाध्य है और आयुक्त की रिपोर्ट पर, यदि स्वीकार कर लिया जाए, तो अंतिम डिक्री पारित की जाएगी। अनुच्छेद 181 प्रथम श्रेणी के मुकदमों पर लागू हो सकता है, लेकिन यह दूसरी श्रेणी पर लागू नहीं होता है, क्योंकि, जैसा कि पहले ही बताया गया है, वहां न्यायालय को प्रारंभिक डिक्री के स्वत: संज्ञान के बाद कार्यवाही जारी रखनी होती है।अधिकारियों पर विचार करने के बाद हमारी राय है कि अपीलकर्ताओं के वकील का तर्क अच्छी तरह से स्थापित है, निर्विवाद अधिकारियों द्वारा समर्थित है और इसे प्रबल होना चाहिए।

(13) सुदर्शन पांडा और अन्य बनाम लक्ष्मीधर पांडा और अन्य (4) के मामले में उड़ीसा उच्च न्यायालय ने इसी प्रश्न पर विचार किया है और निम्नानुसार निष्कर्ष निकाला है: -

"प्रारंभिक डिक्री में पार्टियों के अधिकारों को अंतिम रूप से निर्धारित किए जाने के बाद, उस डिक्री के अनुसरण में मेट्स और सीमाओं द्वारा वास्तविक विभाजन को प्रभावित करने के लिए एक पार्टी या कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा एक आवेदन को

निष्पादन कार्यवाही के रूप में नहीं समझा जा सकता है , लेकिन इसे एक लंबित मुकदमे में एक आवेदन के रूप में लिया जाएगा और इसलिए, परिसीमा का सवाल ही नहीं उठता। इस संबंध में, (1972) 1 Cut WR 140 में निर्धारित सिद्धांत का संदर्भ लिया जा सकता है। *चेतराम अग्रवाल*वी. बुधु मलिक कि अंतिम डिक्री

(2) ए.आई.आर 1930 मद्रास 528।

(3) ए.आई.आर 1933 पेशावर 101 (2)।

(4) ए.आई.आर 1983 उड़ीसा 121।

कार्यवाही मुकदमे की निरंतरता है और सीमा का कोई सवाल ही नहीं उठता। विभाजन के लिए मुकदमा लंबित रहने और प्रारंभिक डिक्री पारित होने के बाद, अंतिम डिक्री कार्यवाही तैयार करने का कर्तव्य न्यायालय पर है जब तक कि कानून के अनुसार अंतिम डिक्री तैयार नहीं हो जाती। यह इस प्रकार है, जैसा कि विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने ठीक ही कहा है, कि विभाजन के मुकदमे में अंतिम डिक्री के लिए एक आवेदन परिसीमा अधिनियम के किसी भी प्रावधान द्वारा शासित नहीं होता है।

(14) उपरोक्त से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि विभाजन के मुकदमे में प्रारंभिक डिक्री के मामले में, अंतिम डिक्री का निकलना उक्त कार्यवाही की निरंतरता है। इसलिए, यह कहना अनुचित है कि परिसीमन की अवधि लागू होगी। ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ताओं की दलील को सही ढंग से खारिज कर दिया।

(15) इन कारणों से, पुनरीक्षण याचिका बिना योग्यता के होने के कारण विफल होनी चाहिए और इसे खारिज किया जाता है।

जेएसटी

न्यायमूर्ति जवाहर लाल गुप्ता और एन.के अग्रवाल के समक्ष

एम/एस मीरा कंप्यूटर्स.-याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य।-प्रतिवादी

C.W.P. No. 1579 of 1998

17 फ़रवरी 1999

हरियाणा सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1973-एस। 40—केंद्रीय बिक्री कर अधिनियम, 1956—एस. 9(2)—भारत का संविधान, 1950— अनुच्छेद 226—संयुक्त उत्पाद शुल्क एवं कराधान आयुक्त, फरीदाबाद ने अपीलीय प्राधिकारी के अधिकार क्षेत्र को संयुक्त उत्पाद शुल्क एवं कराधान आयुक्त (अपील), रोहतक-जेईटीसी (फरीदाबाद) को स्थानांतरित करने के सरकारी आदेशों की जानकारी मिलने के बाद अपील पर निर्णय लिया, जिससे अतिरिक्त मांग रुपये 9,96,850/- से रु. 19,4761 से कम हो गई। ऐसे आदेश की वैधता - पुनरीक्षण प्राधिकारी ने आदेश को पूरी तरह से क्षेत्राधिकार के बिना होने के कारण रद्द कर दिया - याचिका खारिज की जा सकती है - उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण आदेश को बरकरार रखा और याचिका खारिज कर दी।

निर्धारित किया गया कि इस शक्ति को लागू करने में पुनरीक्षण प्राधिकरण उचित था। जाहिर है, आयुक्त ने किसी उद्देश्य से क्षेत्राधिकार हस्तांतरित किया था. यदि आयुक्त के आदेश के बावजूद, कोई अपीलीय प्राधिकारी किसी मामले का फैसला करने के लिए आगे बढ़ा था, तो कानूनी रूप से यह कहा जा सकता है कि कार्रवाई अधिकार क्षेत्र के बिना थी।

(पैरा 9)